International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 8 Issue 08 Ser. III || August 2019 || PP 74-76

"राष्ट्रीय दलित चिंतक: श्री तात्याराव काम्बले तथा दलित विमर्श"

डॉ. दयानंद शास्त्री
गुलबर्गा-कर्नाटक.

बिदर जिले के बसवकल्याण तालुका गडीगौंडगाँव में सन् १९४२ जून १ को जन्मे तात्याराव काम्बले बचपन से ही बुध्दिमान बालक थे । प्राथमिक विषय स्वग्राम में पौढ शिक्षा महाराष्ट्र के निलंगा तालुका में पूर्ण करके डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर द्वारा स्थापित मिलिंद महाविद्यालय, औरंगाबाद में बी.ए. स्नातक की पदवी सन् १९६४ में हासिल कर तथा उस्मानियाँ विश्वविद्यालय हैदराबाद में कानून स्नातक की पदवी प्राप्त कर बाबासाहब के विचारों को आत्मसात कर इन्हीं विचारों में गहन अध्ययनशील होकर समाज में शिक्षा, गरीबी, स्त्रीसुधार, किसान, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जन-जाति पिछडे वर्गों के उन्नति के लिए अपना सारा जीवन समर्पित करनेवाले महान मेधावी के रूप में उनकी पहचान बनी हुई है | दलितों में शिक्षा की उन्नति के लिए उन्होंने बिदर जिले के भालकी तालुके में सन् १९७४ में विद्यार्थी होस्टेल का निर्माण किया । इसी होस्टेल से अनेक विधार्थी विद्यार्जन करके अपने जीवन में सफल बने हुये हैं। उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की है। १) भारत भाग्यविधाता, २) डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर एवं हिन्दू कोड बिल, ३) महान युग-प्रवर्तक डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर, ४) बुध्द बनाम युध्द, ५) जय भिम आदि |

भविष्य में दलितों मे शिक्षा की उन्नति के लिए उन्होंने अनेक शिक्षण संस्थाओं का निर्माण किया। उनमें बलवंतराव वराले शिक्षण संस्था बिदर इसके अधिन कुल ११ स्कूल तथा कॉलेज कार्यरत है । सन् १९८० में बसवकल्याण, जिला बिदर में बसव शिक्षण संस्था स्थापित कर आज इसके अधिन डॉ. बी. आर. अम्बेडकर पदवी-पूर्व, कला तथा वाणिज्य महाविद्यालय प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। इनकी समाज सेवाओं को देखकर सन् १९५२ में भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली ने डॉ. अम्बेडकर 'दलित साहित्य पुरस्कार' सन् २००७ में द बुध्दिष्ट सोसाइटी ऑफ इंडिया शाखा हुबली ने 'डॉ. अम्बेडकर रत्न प्रशस्ति' सन् २०११ में कर्नाटक सरकार द्वारा 'डॉ. बी. आर. अम्बेडकर प्रशस्ति' २०१२ में कर्नाटक सरकार ने 'कर्नाटक राज्योत्सव प्रशस्ति' से सन्मानित किया है। साथ ही २०१४ में दलित साहित्य अकादमी नई दिल्ली ने 'भगवान बुध्द राष्ट्रीय प्रशस्ति' देकर गौरवान्वित किया है। ऐसे महान मृधन्य मेधावी इनके द्वारा सही अर्थों में दलित विमर्श इस प्रकार हैदलित विमर्श क्या है?

दलित विमर्श क्या है? यह सवाल जितना आसान है उसका जवाब ढूँढना उतना ही मुश्किल है। कारण ज्यों ही हम किसी लेखन को 'दलित साहित्य' कहना शुरू करते हैं, इसकी खाँस रचनाएँ आकार ग्रहण करना शुरू कर देती है। दलित से संबंधित सभी चीजें दलित है | अथवा दलित द्वारा या व्यवहृत समस्त रचनाएँ एवं संकेत 'दलित विमर्श' हैं । यह कुछ ऐसे सवाल और संदर्भ है जिससे दलित साहित्य के विचारकों को बार-बार टकराना पडता है। इसमें सौंदर्य शास्त्र का मसला सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहा है। दलित विचारक बार-बार यह कहते रहे हैं कि, प्रचलित साहित्य के मुद्दे और उनके मूल्यांकन के प्रतिमान भिन्न है, इसलिए उनके आधारपर न तो दलित लेखन हो सकता है और न ही उनका मूल्यांकन । 'दलित' अथवा 'दलित साहित्य' का मसला जाति से जुड़ा है इसलिए इनके मूल्यांकन के प्रतिमान भी इन्हीं सूत्रों से विकसित होंगे| जहाँ तक प्रचलित साहित्य का सवाल है, वहाँ पाठ के मूल्यांकन के लिए भारतीय काव्य-शास्त्र के मानदण्डों से लेकर मूल्यांकन की पाश्चात्य धारणाएँ एवं पध्दतियाँ मौजूद है, चाहे वह युनानी साहित्य शास्त्र की मान्यताएँ हो या आधुनिक साहित्य की रोमांटिक अथवा मार्क्सवादी धारणाएँ। इन धारणाओं ने लम्बे समय तक साहित्य और विचारधारा की दुनिया पर

राज किया है। श्री तात्याराव काम्बलेजी की मान्यता है कि, इन धारणाओं के आधारपर दलित साहित्य का मूल्यांकन संभव नहीं है। इस साहित्य की व्याख्या और स्थापना केलिए एक नये सौंदर्य शास्त्र की जरूरत है।

दलित साहित्य का मूल्यांकनः

तब सवाल है कि, दलित साहित्य सवाल यह है कि, दलित साहित्य का मूल्यांकन किस प्रकार होगा? इनके अनुसार उसके लिए कोई नया सौंदर्य शास्त्र रचा जाएगा अथवा मार्क्सवादी जैसी धारणाओं के अंदर से ही दलित पाठ के मूल्यांकन के प्रतिमान अथवा मानदण्ड विकसित होंगे? यह एक अहम सवाल है। क्योंकि, 'मार्क्सवाद' पर जोर देने के कारण ही दलित विचारको ने प्रगतिशिल साहित्य की इस विचारधारा के खिलाफ कडा प्रतिरोध दर्ज किया है । कारण उनका मानना है कि, मार्क्सवादी विचार पध्दति में दमन, शोषण और उत्पीडन की बुनियादि कारण आर्थिक माना जाता है । जब की दलित लेखन की बुनियाद वर्ण एवं जातिकेन्द्रित असमान सामाजिक व्यवस्थापर टिकी हुई हैं। यहाँ सवाल आर्थिक असमानता का नहीं, जातिय संरचना (जाति एवं जन्म) का है। डॉ. अम्बेडकर ने तो यह साफ-साफ कहा था कि, "जातिप्रथा केवल श्रमिकों का विभाजन नहीं है. वह वंशगत है, जिसमें श्रमिकों का वर्गीकरण एक के ऊपर दूसरी सीढीनुमा है । इसमें जिसका जन्म जिस तल, जाति में होता है वह उसी तल में मरता है |

दलित संदर्भः

यह भारतीय सामाजिक संरचना का व दलित संदर्भ हैं। जिसकी बुनियाद पर आधुनिक दलित साहित्य टिका हुआ है। ऐसा नहीं की इस पर पारंपारिक विचारधार का असर नहीं है, पर प्राथमिक तौर पर आधुनिक दलित साहित्य डॉ. अम्बेडकर के विचारों से नियंत्रित और संचालित होता है। इसलिए जब हिन्दी प्रगतिशील लेखक, दलित लेखक अथवा विचारक के रूप में अश्वघोष, संत कबीर, संत रैदास, हिराडोम, प्रेमचंद, राहूल सांकृत्यायन, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, गोपाल उपाध्याय, मदन दिक्षित तथा अमृतलाल नागर आदि की चर्चा करते हैं। तो दलित समुदाय के विचारक उनके खिलाफ उठ खड़े होते हैं। प्रेमचंद पर सबसे अधिक हमले इसलिए हुये हैं कि, प्रगतिशील लेखकों ने उनकी रचनाओं को दलित साहित्य के रूप में प्रोजेक्ट करना शुरू कर दिया। उनका तो कुछ नहीं बिगडा पर इस वैचारिक आँधी से प्रेमचंद की विश्वसनीयता और वंचित समाज के प्रति उनकी पक्षधरता जरूर विवाद के घेरे में आ गयी। बरहाल तो यह बहस लम्बी चलेगी पर इन लेखकों को दलित लेखन के बाहर रखने की माँग इसलिए भी होती है कि, वर्ण एवं जाति केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ यह लेखक एक सीमा के बाद आगे नहीं जाते और न ही उसके खिलाफ़ खड़े होने का साहस ही दिखाता है । जैसे मार्क्सवादी विचारक सामंती और पूँजीवादी व्यवस्था को ध्वस्त कर श्रमिकों की एक जनतांत्रिक व्यवस्था (समाजवाद) कायम करना चाहते हैं, ठीक वैसे ही दलित विचारक वर्ग एवं जाति केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था को समाप्त कर एक जन्य व्यवस्था कायम करना चाहते हैं| ऐसी व्यवस्था जहाँ जाति के नाम पर किसी भी व्यक्ति अथवा समुदाय का शोषण न हो। बहुजन समाज की धारणा इसी आधार टिकी हुई हैं । बहुजन की यह धारणा ही दलित लेखन और आन्दोलन के केन्द्र में हैं। जहाँ मनुष्य वर्ण एवं जाति के घेरे से मुक्त है, जिसपर आधुनिक दलित विमर्श गतिशील होता है। वर्ण एवं जाति केन्द्रित इस असमान समाजिक व्यवस्था का भगवान गौतम बुध्द ने पहली बार विरोध किया था। तथा इसे मनुष्य के विकास के लिए सबसे बडा अभिशाप बताया था । महत्वपूर्ण बात यह है कि, इन्होंने दो कदम आगे बढकर इस व्यवस्था को खत्म करने के लिए एक नई सामाजिक व्यवस्था की परिकल्पना की । उन्होंने साफ-साफ कह दिया कि सभी मनुष्य बराबर हैं और जाति, और जाति अथवा जन्म के आधार पर इनमें कोई मौलिक भिन्नताएँ नहीं हैं |

"जच्चा बसलोहोति, न जज्चा होती ब्राह्मणों ।
कम्मना वसलोहोति, कम्मना होती ब्राह्मणों" ।।2

अर्थात् जन्म से कोई शुद्र होता है, न जन्म से कोई ब्राह्मण । कर्म से शुद्र होता है और कर्म से ही ब्राह्मण ।

श्री तात्याराव काम्बलेजी द्वारा दलित विमर्शः

श्री तात्याराव काम्बलेजी के अनुसार जाहिर है, गौतम बुध्द ने जिस नई सामाजिक व्यवस्था एवं उनमें मनुष्य के स्थिति की बाद की उसे पारंपारिक विचारोंकों ने एक शिरेसे खारिज किया । अगर आज भी भारतीय सामाजिक व्यवस्था (हिन्द) में जाति-प्रथा विद्यमान है तो उसका सबसे बड़ा यही कारण है कि, मुख्य धारा के नियंताओं ने कभी-कभी उसे बदलने की कोशिश नहीं की। हाँ, सुधार की बात जरूर की । जैसा की महात्मा गाँधी कहते हैं, जब कि पूँजीवाद के उदय के बाद किसी-न-किसी रूप में जनतांत्रिक प्रक्रियाओं के साथ जुडकर इस प्रकार की (रूढिवादी पारंपारिक) सामाजिक व्यवस्थाओं का अंत हो जाना चाहिए था। मार्क्सवाद ने वर्गीय समाज के माध्यम से एक नई सामाजिक व्यवस्था की परिकल्पना जरूर प्रस्तुत की उसे सफलता भी मिली। हिन्दी के अधिकांश लेखकों ने अपने रचनात्मक लेखन में जन्म एवं जाति के कारण हो रहे शोषण, दमन और उत्पीडन को केन्द्रिय आधार बनाते हुए दलित समाज
के इन्हीं दुःखों से मुक्ति की परिकल्पना की है। चाहे वह ओम्प्रकाश वाल्मिकी की झुठन जैसी आत्मकथात्मक कृति हो अथवा कौसल्या बैंसंत्री दोहरा अभिशाप, मोहनदास नैमिषैराय की अपने-अपने पिंजरे अथवा सूरजपाल चौहान द्वारा लिखित तिरस्कृत, जयप्रकाश कर्दम की नौ बार जैसी कहानियाँ हो अथवा सुशील टाकभौरे की सिलिया । शिवराज सिंह बैचेन का आत्मकथात्मक अंश बेवक्त गुजर गया माली हो या प्रल्हादचंद्र दास की कहानी लटकी हुई शर्त आदि इन लेखकों ने दलित समाज के उत्पीडन (दुख) का सबसे बड़ा कारण वर्ण एवं जाति केन्द्रित भारतीय हिन्दू सामाजिक व्यवस्था को ही माना है। जिसके कारण उन्हें सामाजिक जीवन की मुख्यधारा में हासिए की जिन्दगी व्यथित करनी पड़ती है।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना जरूरी है कि, कोई भी विचारधारा अथवा व्यवस्था कभी-भी अपने आप में पूर्ण नहीं होती। श्री तात्याराव काम्बलेजी ने अपनी किताब भारत भाग्य विधाता में लिखा है - "परिवर्तन अथवा विकास की प्रक्रिया में या तो उसमें सुधार होता है अथवा संशोधन, नहीं तो वे नष्ट हो जाती है । या हाशिए पर चली जाती है। कई बार इस प्रक्रिया में कुछ छोटे और कुछ बडे संघर्ष भी होते हैं, चाहे वे राजनैतिक हो सामाजिक। ये संघर्ष की समकालीन परिस्थितियों में प्रचलित विचारधाराओं अथवा व्यवस्थाओं का मूल्यांकन करते हुए उनकी अवधि तय करते हैं।"3

निष्कर्षः-

अंत में मैं यही कहना चाहता हूँ कि, दलित साहित्य के समर्थन अथवा विरोध में जो संघर्ष अथवा वैचारिक बहसें हो रही है वे निश्चित रूप से साहित्य और विचारधारा की दुनियाँ में दलित विमर्श का वास्तविक स्थान तय करेंगी। यह अवधि क्या होगी, फिलहाल कुछ कहना मुश्किल है कारण अनुमान करना भविष्यवाणी की तरह है। जिसके विरोध में दलित साहित्य की धारणाएँ विद्यमान है।

डॉ. दयानंद शास्त्री
हिन्दी सहायक प्राध्यापक
एन.व्ही. पदवी महाविद्यालय,
गुलबर्गा-कर्नाटक

संदर्भ ग्रंथः

१. डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर भाषण और लेखन, खण्ड-५, पृष्ठ-३७६
२. त्रिपिटिका : गौतम बुध्द, पृष्ठ-६७
३. भारत भाग्यविधाता : तात्याराव काम्बले-पृष्ठ-१७